read out email print text view add to clipping send feedback Article Rank

पहल

ईंट के भट्ठों से 'अपने घर' तक

ननकारी स्थित 'अपना घर' में सँवरता है ईंट-भट्ठों पर काम करने वाले बच्चों का भविष्य

कभी वे हाथ ईंट-भट्ठों में ईंटें पाथते थे। चट्टे लगाते थे। खच्चरों पर ईंटें लादकर उन्हें हाँकते थे। गलती हो जाने पर मालिकों का कोप-भाजन भी बनते थे। आज उन्हीं हाथों में पेन और किताब नजर आती हैं। वही हाथ कविता और निबन्ध लेखन करते हैं। यह परिवर्तन हुआ है महेश पाण्डेय के प्रयासों से। उन्होंने ईंट-भट्ठों पर काम करने वाले बच्चों के लिए ननकारी में 'अपना घर' की स्थापना की। यहाँ ये बच्चे अपने भूत की कालिख को विद्या और संस्कारों से साफ कर रहे हैं। इनकी अपनी एक संसद है और हर प्रक्रिया लोकतांत्रिक तरीकों का पालन करती है। महेश की हसरत है कि इन बच्चों को मुकाम मिले।

दिवाकर पाण्डेय

ननकारी के एक छोटे-से घर में 'संसद' का-सा दृश्य है। ज्ञान, लवकुश, हंसराज, सोनू, अशोक, आशीष, और जितेन्द्र समेत 12 बच्चे इसके सदस्य हैं। ये बच्चे ईंट-भट्ठों पर काम करने वाले मजदूरों के हैं। सभापति का नाम है सागर। सदस्य लोकतांत्रिक तरीके से एक-दूसरे की शिकायत कर रहे हैं। जरा शिकायतों से भी दो-चार हो लीजिए- इसने आज मुझे चिढ़ाया है, इसने आज झूठ बोला है...। सभापति ने शिकायतें सुनी और निर्णय सुना दिया। किसी को दिन भर मौन रहना होगा तो किसी को बर्तन साफ करने होंगे। 'बी-135' स्थित इस 'संसद' का नाम है 'अपना घर।' यहाँ ईंट-भट्ठों में काम करने वालों के बच्चे रहते हैं। वे पढ़ाई करते हैं, कम्प्यूटर सीखते हैं, एक-दूसरे पर खीझते हैं, बिलकुल लहरों की तरह लड़ते हैं और फिर एक हो जाते हैं। वे एक पत्रिका भी निकालते हैं। नाम दिया है 'बाल सजग।' इन बच्चों की जिंदगी कभी भट्ठों की तरह ही तप रही थी। अब वे भविष्य के सुंदर सपने बुन रहे हैं। यह बुनाई संभव हुई है महेश पाण्डेय के प्रयासों से। महेश समाज सेवा से 17 साल की उम्र में ही जुड़ गए थे। इसी सफरनामे में 1997 में वह 'आशा' से जुड़े। 2005 में उनका साबका दीदी (विजया रामचंद्रन) से हुआ। वह ईंट-भट्ठों पर काम करने वाले बच्चों के लिए भट्ठों पर ही स्कूल चलाती थीं (अभी भी चलते हैं।)। उन्हें एक ट्रेनर की जरूरत थी। 'आशा' के संदीप पाण्डेय ने महेश से कहा कि वह दीदी की खोज पूरी कर दें। महेश विजया दीदी के साथ कानपुर आ गए। उन्होंने गौर किया कि शहर के भट्ठों पर कई राज्यों के मजदूर हैं। सभी बँधुआ हैं। भट्ठों पर काम का सीजन खत्म होने पर परिवार चले जाते थे। इससे बच्चों की पढ़ाई छूटती थी। जो पढ़ा-लिखा वह भी भूल जाते थे। पढ़ाई-सत्र पूरा ही नहीं होता था। महेश कहते हैं,'मैंने विजया दीदी से बात की और बच्चों को शहर में ही रोककर पढ़ाई कराने की सलाह दी।' महेश ने एक परिवार से एक बच्चा लेने की बात कही। दीदी को महेश की सलाह पसंद आई और उन्हें ऐसा करने को कहा। माँ-बाप से उनके बच्चों को लेना रेत से तेल निकालने जैसा था। बच्चों को किसी के हवाले कर कमाई में 25 रुपए का नुकसान किसी को गँवारा नहीं था। माँ-बाप को बच्चों के बेचे जाने का डर था। बकौल महेश,'बहुत कठिन दौर था। हर परिवार के साथ देर रात तक ढेरों मीटिंग्स की। उन्हें पढ़ाई का महत्व समझाया। यह भी कहा कि वे जब चाहें बच्चों से मिल सकते हैं।' इस तरह कुल 12 बच्चे महेश को मिले। अब बच्चों के लिए कोई ठौर भी चाहिए था। महेश की सुनिए, 'मुझे याद नहीं कि ननकारी में ऐसा कोई घर बचा हो, जिसे मैंने खटखटाया न हो। सबके सिरों ने दाएँ-बाएँ ही दोलन किया।' महेश के ये दिन ऐसी ही मुश्किलों से कटे। धीरे-धीरे उम्मीद के सोतों से पानी फूटना शुरू किया। ननकारी में ही एक घर मिला, आईआईटी, कानपुर के कुछ प्रोफेसर्स ने आर्थिक सहयोग किया और महेश ने 'अपना घर' बसाया। इसका यह नाम पड़ने का किस्सा भी काफी रोचक है। बकौल महेश, 'नाम रखने के लिए हम सबकी मीटिंग हो रही थी। किसी ने 'खुशियाली' कहा तो किसी ने 'टकला' (उस वक्त एक बच्चा गंजा था।) एक ने कहा कि हमारा कोई अपना घर नहीं होता सो इसका नाम 'अपना घर' रखा जाए।' आखिर घर बसा। महेश ने यहाँ 'पौधे' रोपे। उन पर जमा जालों को हटाया और उन्हें संस्कारों के पानी से सींचा। अब ये 'पौधे' अपनी हरियाली और मजबूत होती जड़ों से वट-वृक्ष बनने की राह के मुसाफिर हैं।

आसाँ नहीं थी डगर

महेश के लिए 'अपना घर' बनाने की मुहिम जंग जीतने जैसी रही। वह फरमाते हैं,'कुछ महीनों में ही मैं आजिज आ गया था। सबका वही गँवारू रवैया। गाली-गलौज और हर वह काम जो सभ्य नहीं कहा जा सकता। बहुत मंथन किया कि क्या करूँ!' महेश ने तय किया कि सबकी जिम्मेदारियाँ तय की जाएँ। पता लगाया कि गलतियाँ कहाँ होती हैं। 11 गलतियाँ पकड़ में आईं। इन्हें धाराओं के रूप में लिखा गया। सब कुछ सबकी सहमति से हुआ। सजा तब तक नहीं दी जाती जब तक गलती करने वाला खुद अपनी गलती नहीं मान लेता। इसके अलावा 25 जिम्मेदारियाँ तय की गईं। टाइम टेबल और मॉनीटर बनाया। चुनाव लोकतांत्रिक प्रकिया से हुआ। मॉनीटर बनने वाले को बताना था कि वह मॉनीटर क्यों बन रहा है और बनकर क्या कदम उठाएगा। अब यह 'संसद' डेढ़ साल की हो गई है और उसके छह अध्यक्ष (मॉनीटर) हो चुके हैं। यही नहीं, जब एक साहब अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन नहीं कर सके तो उन्हें बर्खास्त कर दिया गया।

ऐसे निकलती है पत्रिका 'बाल सजग'

बच्चे कागज पर कविता और कहानियाँ लिखते हैं। सब उनकी स्वरचित होती है। इन्हें लकड़ी के बोर्ड पर थम्बपिन की मदद से लगा दिया जाता है। सम्पादक के पास सभी रचनाएँ शनिवार तक आ जाती हैं। वह इन्हें पढ़ते हैं और खराब होने पर वापस लौटा देते हैं। रविवार को सभी रचनाएँ पत्रिका (बोर्ड) पर लग जाती हैं। पिछली रचनाएँ भी रिकार्ड में रहती हैं।

'अपना घर' में सँवरी इनकी जिंदगी

नाम- मुकेश यूँ जुड़े 'अपना घर' से-

झारखण्ड के मुकेश 4 साल की उम्र में ईंट-भट्ठे पर काम करने लगे थे। कानपुर आए और ईंटों की निकासी करने लगे। वह भट्ठे के पास स्थित स्कूल भी जाते। महेश ने जब उनके माँ-बाप से उसे शहर में ही छोड़ने को कहा तो वे तैयार नहीं हुए। महेश ने मुकेश के माँ-बाप को उस घर का मुआयना करवाया, जहाँ उसे रखना था। वे जब मुतमईन हो गए तभी उन्होंने मुकेश को आने दिया। अब मुकेश खुद पढ़ने के साथ भट्ठों के अन्य बच्चों को भी पढ़ाते हैं।

नाम- अशोक यूँ जुड़े 'अपना घर' से-

अशोक हमीरपुर के हैं। पैदाइश भट्ठे पर ही हुई। पाँच साल के हुए तो भट्ठे पर काम करने लगे। काम था ईंट पाथना और चट्टे लगाना। ईंट टूटने पर मार पड़ती। 2005 में कानपुर आए तो भट्ठे पर ही पढ़ाई करने लगे। मन तो रमा पर बीच-बीच में पढ़ाई छूट जाती थी। महेश पढ़ाई के लिए साथ चलने को कहा तो तुरंत तैयार हो गए। अब आशोक कक्षा छह में पढ़ रहे हैं और 'बाल सजग' का संपादन भी।

नाम- सागर यूँ जुड़े 'अपना घर' से-

12 साल के सागर बिहार के हैं। भट्ठे पर ही पैदा हुए। थोड़ा बड़े हुए तो काम मिला- खच्चर पर बालू लाना-ले जाना। खच्चरों के भटक जाने पर मार पड़ती थी। 2004 में कानपुर आए। यहाँ भी वही काम। इसी बीच विजया दीदी के स्कूल में पढ़ने लगे। मन रमने लगा। महेश ने जब प्रस्ताव रखा तो तुरंत तैयार हो गए। अब सागर कक्षा पाँच में पढ़ रहे हैं। वह नाटक, कविता, कहानी में बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं।

नाम- हंसराज यूँ जुड़े 'अपना घर' से-

13 साल के हंसराज प्रतापगढ़ के हैं। छह साल की उम्र से ईंट-भट्ठे पर पहले पथाई फिर निकासी करने लगे। बाद में घोड़ों पर लदाई करने लगे। रात के 1 बजे से दिन के 12 बजे तक काम करते थे। एवज में मिलते थे 25 रुपए और गलती होने पर गाली। महेश ने पढ़ाई के लिए जब इन्हें अपने साथ रखना चाहा तो घरवाले तैयार नहीं हुए। वह छह महीने तक सेंटर पर खुद आते और हंसराज का हाल-चाल लेते। अब हंसराज मन लगाकर पढ़ाई कर रहे हैं।

PRESSMART

www.intel.com Feedback - Ads by Google

www.intel.com Feedback - Ads by Google